9 अप्रैल, राहुल जयंती पर विशेष

राहुल सांकृत्यायन का विकासमान व्यक्तित्व

– विष्णु चंद्र शर्मा

आज के भारत में राहुल सांकृत्यायन लेनिन के बहुत करीब लगते हैं। दोनों का व्यक्तित्व विकासमान है। दोनों अपनी रचनाओं से देश को बदलने का बीड़ा उठाते हैं। 'लेनिन' पुस्तक में राहुल जी ने लिखा है– ''इतिहास में ऐसा अन्य व्यक्ति नहीं देखा गया जो इतनी सैद्धांतिक सूझ, राजनीतिक प्रतिभा, दूरदर्शिता और इतना अदम्य साहस रखता हो। न ही कोई ऐसा राजनीतिक नेता हुआ, जो जनता के साथ इतना घनिष्ठ संबंध रखता हो और जिसमें जनता विश्वास करती हो। लेनिन सच्चे अर्थों में 'असाधारण जनता' के नेता थे।''

जिन्होंने पांच खंडों में राहुल सांकृत्यायन की आत्मकथा : 'मेरी जीवन यात्रा' और जीवनियां : नये भारत के नये नेता (खंड-1, 1942, खंड-2, 1942), बचपन की स्मृतियां (1953), अतीत से वर्तमान (प्रथम खंड,1953), स्तालिन (1954), लेनिन (1954), कार्ल मार्क्स (1954), माओ त्से तुंग (1954), सरदार पृथ्वी सिंह (1955), घुमक्कड़ स्वामी (1955), मेरे असहयोग के साथी (1956), जिनका मैं कृतज्ञ (1956), वीर चंद्र सिंह गढ़वाली (1956), महामानव बुद्ध (1956), सिंहल घुमक्कड़ जयवर्द्धन(1956), कप्तान लाल (1960), सिंहल के वीर पुरुष (1961) पढ़ी हैं, उन्हें इतिहास में राहुल जैसा अन्य व्यक्ति भारत में नहीं मिला होगा।

उनकी सैद्धांतिक सूझ के लिए उनके यात्रा-वृत्तांत को देखना जरूरी है। मेरी लद्दाख यात्रा (1962), श्रीलंका (1926-27), तिब्बत में सवा साल (1931), मेरी यूरोप यात्रा (1932), यात्रा के पन्ने (1934-36), जापान (1935), ईरान (खंड-2,1935), मेरी तिब्बत यात्रा (1937), रूस में पच्चीस मास (1944-47), किन्नर देश में (1948), दार्जिलिंग परिचय (1950), कुमायूं (1951), गढ़वाल (1952), नेपाल (1953), जौनसार देहरादून (1955), एशिया के दुर्गम भूखंडों में (1955), चीन में क्या देखा (1960)। इनमें से ज्यादातर पुस्तकें आज खोजने पर शायद ही मिलें।

राहुल जी की राजनीतिक प्रतिभा का विकास समझने के लिए इतिहास, दर्शन, विज्ञान और साहित्य में गहरी पैठ जरूरी है। आत्मकथा डॉ.हरिवंशराय बच्चन ने भी लिखी है पर वह मध्य वर्ग की एक सतही कहानी है। बच्चन कहीं कुंठित, कहीं त्रासदी और अंतत: उच्च वर्ग में समाहित होने की एक कवि की कहानी कहते हैं। यहीं याद रखें मुक्तिबोध के आत्मसंघर्ष की धीरज गाथा जो मध्य वर्ग से छलांग लगाता है। मैंने 'मुक्तिबोध की आत्मकथा' में उनके चिंतन और क्रांतिकारी दौर की कहानी लिखी है।

राहुल की जीवन यात्रा का विस्तार आप खुद देखें। आप जैसे उनके साथ जापान में घूम रहे हैं। वह आपको बताते हैं : '1868 में जब जापान अपना द्वार खोलने के लिए मजबूर हुआ और उसने पश्चिमी शिक्षा और साहस को स्वीकार करना शुरू किया, तो बौद्ध धर्म के लिए भारी ख़तरा हो गया। शिक्षित लोग़ धड़ाधड़ ईसाई बनते जा रहे थे। बौद्ध कुछ समय तक किंकर्त्तव्यविमूढ़ दिखलाई पड़े, किंतु उन्होंने भी अपने तरुणों को संस्कृत सीखने के लिए पश्चिमी देशों में भेजा और सामाजिक सेवा को धर्म प्रचार का साधन बनाया (पृ. 396)'। राहुल जी की जीवन-यात्रा आपको इतिहास में पैठना सिखाती है। आप उनके साथ यात्रा करते हुए पिछड़े और उपेक्षित जापान को सांस्कृतिक विकास के लिए अपना द्वार खोल कर 'बाहर' की दुनिया से संवाद करते हुए देखते हैं। भारत और तिब्बत पड़ोसी हैं। राहुल जी का यात्री आपके मन में बदलते हुए भारत और ठहरे हुए तिब्बत को एक साथ देखने को तैयार कराता है। आपके मन में राहुल जी सवाल पैदा करते हैं : 'तिब्बत आज तक पिछड़ा हुआ देश था, किंतु अब वह बहुत दिनों तक पिछड़ा नहीं रह सकता। सिङ् क्याङ् की भांति वह भी चीन का अंग है। पुराने चीन की जगह पर नवीन चीन हमारी आंखों के सामने उठ रहा है, जो तिब्बत को पिछड़ा और उपेक्षित नहीं रख सकता। तो भी तिब्बत के प्रति हमारे भी कुछ सांस्कृतिक कर्त्तव्य हैं।' (पृ.423)

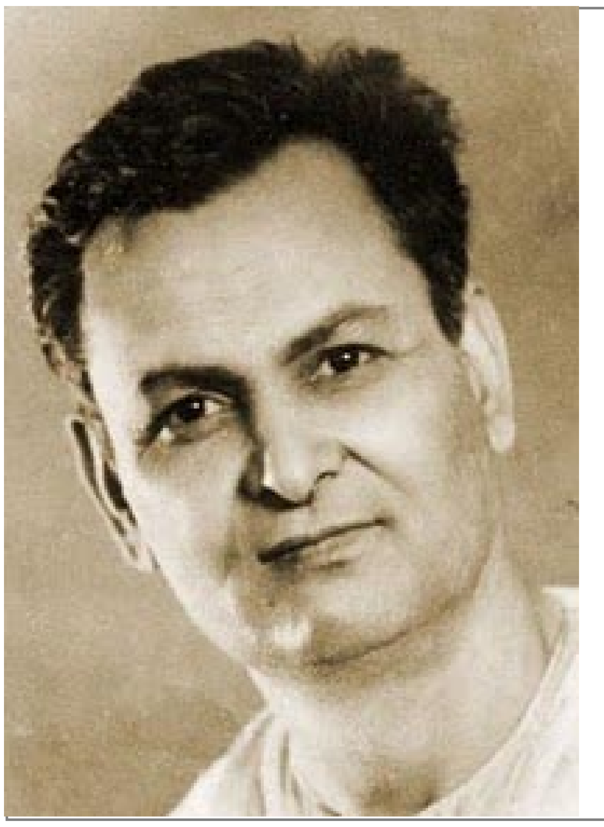

राहुल जी की राजनीतिक प्रतिभा का विकास समझने के लिए इतिहास, दर्शन, विज्ञान और साहित्य में गहरी पैठ जरूरी है। आत्मकथा डॉ.हरिवंशराय बच्चन ने भी लिखी है पर वह मध्य वर्ग की एक सतही कहानी है। बच्चन कहीं कुंठित, कहीं त्रासदी और अंततः उच्च वर्ग में समाहित होने की एक कवि की कहानी कहते हैं। यहीं याद रखें मुक्तिबोध के आत्मसंघर्ष की धीरज गाथा जो मध्य वर्ग से छलांग लगाता है। मैंने 'मुक्तिबोध की आत्मकथा' में उनके चिंतन और क्रांतिकारी दौर की कहानी लिखी है।

आजादी के पूर्व राहुल जी ने पुराने चीन और नये चीन की आंखों देखी यह कहानी हमें सुनाई थी। आंखों देखा रूस उनके लिए इतिहास और कल्पना, दोनों था। वह भारत में तक्षशिला और नालंदा के विश्वद्यिालयों की विश्वदृष्टि से परिचित कराते हुए 'बाइसवीं सदी' (1923) का भारत वर्ष के सामने कल्पना से फैन्टेसी के विस्तृत दृश्य में परोस देते हैं। यह सांस्कृतिक यात्रा का विकासमान भारत आपको और कहां नज़र आया है, यह आप पिछले आठ दशक के यात्रा-वृत्तांत से गुजर कर जान सकते हैं। 'बाइसवीं सदी' जहां अदूरदर्शी किसान राहुल की कल्पना को हमारे सामने सीरियल की तरह दिखाता है, वहीं विकासमान मार्क्सवादी राहुल अपने समय के शिक्षा केंद्रों में आजादी के बाद ठहरे हुए 'दिमागी गुलामी' की विडंबना का चित्र भी पेश करता है। साहस से अर्जित तिब्बत की उनकी सामग्री पर इंगलैंड और अमेरिका उस समय उन्हें मोटी रकम दे रहा था। पर राहुल के मन में था : नये भारत के विद्वानों का भविष्य। वह लिखते हैं, ''तिब्बत ने अपने यहां सुरक्षित बहुमूल्य संस्कृत-ग्रंथों को हमारे लिए सुलभ कर दिया, पचास-साठ अनमोल ग्रंथों के फ़ोटो भी आकर पटना में ग्यारह वर्ष से पड़े हैं, किंतु हमारे देश को उनकी परवाह नहीं।

आजाद भारत की सरकार के पास उन अनमोल ग्रंथों के प्रकाशन और संपादन के लिए रुपये नहीं हैं।'' रुपया : पूंजी का एक सूत्र है जिसकी व्याख्या में निहित है मार्क्स का पूरा जीवन-दर्शन : मार्क्सवाद। राहुल जी उसी भारत के विकासमान मार्क्सवाद की एक कड़ी हैं। राहुल के विकासमान व्यक्तित्व का मूल्य इस बात में है कि वह जीवन यात्रा में खुद सामंतवाद की कई मंजिलों तक छलांग लगाते हैं। नये और पुराने विश्व की सैर पाठक को कराते हैं। वह अपने साथ 'समय से पहले' प्रतिभा के विलोप होने या या 'पलायन' करने का संकट भी विकासशील देश के सामने रखते चलते हैं। एक ओर दलाई लामा और अमेरिका है जो तिब्बत को पिछड़ेपन में बंद रखने के लिए राजनीतिक खेल तिब्बत की जनता के साथ खेल रहे हैं, दूसरे राहुल जी हैं जो तिब्बत की खोज करते हुए पुराने तिब्बत को नये चीन और नये भारत के साथ आधुनिक विश्व में विकसित होते देखना चाहते हैं। पहले वह आपके सामने तिब्बत की सामंती व्यवस्था, मठों की दुनिया का नक्शा पेश करते हैं : कैसे स-रो विश्वविद्यालय विकास के बाद न्यूयार्क विश्वविद्यालय बनेगा।

वह लिखते हैं : 'स्मरण रखना चाहिए की जगह पर ग्यॅल-व-रिन-पो-छे (जिन रत्न) शब्द का प्रयोग करते हैं। पहिले को छोड़ कर बाकी सभी दलाई लामों के नामों के अंत में ग्यॅ-म्छो (सागर) शब्द का योग होता है, इसलिए मंगोल लोग़ों ने त-ले-लामा कहना शुरू किया, जिसका बिगड़ा रूप दलाई लामा है। टशी (बक-शिस) लामा को मोट भाषा में षण-छेन-रिन्-पो-छे (महापंडित) कहते हैं।' (पृ.42)

तिब्बत यात्रा के समय 'महापंडित' की उपाधि दी थी काशी की पंडित सभा ने रामोदरदास बाबा को। यह रामोदरदास बाबा परसा का मठाधीश बनने वाला था, पर उसे तो 'ठहरने' की आदत नहीं थी। मठ की अपार संपत्ति को उसने एक अच्छे नक्शानवीस की तरह देखा-परखा, पर वह मठ से भाग निकला। फिर लंका और तिब्बत की बीहड़ यात्रा में वह महापंडित राहुल सांकृत्यायन बना। 1939 का किसान सत्याग्रह याद कीजिए। नागार्जुन पटना से राहुल जी के साथ छपरा आये थे। जमींदार से किसानों का झगड़ा हारी-बेगारी से शुरू हुआ। कैसे राहुल जी के सिर पर लाठी से हमला हुआ, इसे सारा देश जानता है। अमवारी राहुल जी का पर्याय बन गया था। यदि 'भारत के किसान विद्रोह' (1850-1900) पुस्तक एल.नटराजन की आपको याद हो तो मोपल विद्रोह से अमवारी, सुल्तानपुर, छपरा के किसान सत्याग्रह की विकासमान यात्रा में एक किसान क्रांतिकारी राहुल को पहचानने में आप भूल नहीं करेंगे। यह समय बिहार में कांग्रेस सरकार बनने का था। कांग्रेस के साथ थे बड़े जमींदार और मिल मालिक। राहुल जी ने किसान से तब बातचीत की थी। आप भी सुनें :

राहुल : तुम्हारे गांव में कितने खेत और कितने घर आसामी हैं ?

किसान : पांच सौ बीघा (300 एकड़ से कुछ ऊपर) और पांच सौ परिवार हैं - हिंदू-मुसलमान दोनों।

राहुल : तम्हारे मालिक कौन हैं ?

किसान : हमारे मालिक डॉ. मां. साहब हैं।

राहुल : तब तो तुम्हारा अहोभाग्य है। कांग्रेस के इतने बड़े नेता तुम्हारे मालिक हैं।

किसान : अहोभाग्य। सारे रय्यत परेशान हैं। एक किश्त मालगुजारी जो बाकी रह जाये, तो मार कर खाल उधेड़ लेते हैं। हरी-बेगारी, जुर्माना के मारे नाक में दम रहता है। मालिक की 75 बीघे की बहाश्त (अपनी खेती) है और उसका सारा जोतना-बोना हम लोगों को अपने हल-बैल से करना पड़ता है।

यह लेनिन की तरह राहुल जी की अपने इलाके के किसान से साक्षात्कार का एक अंश है। राहुल के मार्क्सवाद की यहां एक संक्षिप्त टिप्पणी थी : 'यह थे कांग्रेस सरकार के एक मंत्री और शायद दूसरे मंत्रियों से काफ़ी अच्छे।' (मेरी जीवन यात्रा खंड-2, पृ.501) आज आप कांग्रेस के साथ जनता पार्टी, या जमींदार (मालिक का) एक से एक नाम जोड़ कर किसान की कहानी का विकासमान या अवसरवादी दो खेमा जनता के सामने रख सकते हैं। राहुल जी सिर्फ़ भंडाफोड़ या क्रांति के लफ्फाज या कानूनी मार्क्सवादी नहीं थे। वह शुरू से हर क्षेत्र के तर्जुबे पर जोर देने वाले जनता के पक्षधर साथी थे। वे तर्जुबे को वैज्ञानिक प्रयोगशाला मानते थे। गणित और विज्ञान में उनके तर्जुबे को यदि किसान आंदोलन के उनके तर्जुबे के साथ मिला कर हिंदुस्तान के सोशलिस्ट-कम्युनिस्ट इतिहासकारों ने देखा-परखा होता तो विशाल हिंदी क्षेत्र अयोध्या के 'मस्जिद गिराऊ' झगड़े में आज सिमट नहीं जाता। आज जो नेता, इतिहासकार हैं, बिचौलिया-से हैं। राहुल जी के दो प्रसंग आप पढ़ लें : किसान क्रांति का भ्रम या संपूर्ण क्रांति का तमाशा समझ में आ जायेगा।

एक प्रसंग है छपरा में हथुवा महाराज बहादुर का। याद रखें, छपरा के राहुल जी इतिहास लेखक भी हैं और वहां के एक-एक गांव के हज़ारों किसान उनके संगी उसी क्षेत्र के थे। राहुल जी ने लिखा : 'छपरा में बड़ी जमींदारी हथुवा के महाराज बहादुर की है। सारा कुआड़ी परगना उनका है।' मीरगंज छिनौला के जमींदार अशर्फी साहु हैं। साहु कहते हैं : 'मैंने किसी आसामी को खेत नहीं दिया है।' राहुल जी का उस पर नोट है : 'लेकिन वह बोल रहे थे सरासर झूठ। 489 बीघा खेत के लिए उनके पास हल-बैल कहां था? जब अशर्फी साहु ने एक निलहे साहब से यह जमीन और कोठी खरीदी, उस वक्त कितने ही आसामी खेतों को जोता करते थे। उनसे साहु ने खेत निकाल लिया।' (वही, पृ.502) यह नोट प्रेमचंद से रेणु की कहानी का भारतवर्ष है। आप अशर्फी साहु के वंशधरों के नये नाम-पते खोज सकते हैं, पर आप को दूसरा राहुल नहीं मिलेगा जो किसानों का पक्षधर लेखक हो और उनकी राजनीतिक लड़ाई का लेनिन जैसा दोस्त नेता।

दूसरा प्रसंग है बढ़ैया ताल का। हंस संपादक राजेन्द्र यादव हैं जो प्रेमचंद को हंस के पन्नों पर ढो रहे हैं और 'नारी-मुक्ति' के मसीहा होना चाहते हैं। राहुल जी न मार्क्स को अपने साहित्य में ढोते हैं, न नारी-मुक्ति का स्वांग रचते हैं। वह लिखते हैं : 'बढ़ैया ताल चालीस गांवों का एक विस्तृत मैदान है। यहां की जमीन नीची है, पांच हज़ार से अधिक लोग जमा थे। ... उस दिन औरतें अपनी मगही भाषा में गाना गा रही थीं- चलु-चलु माता। जेहल के ज बैयारे।' यह देखने की आंखें मृणाल पांडे और मन्नू भंडारी के पास आज भी नहीं है। राहुल जी रेपुरा में घूम रहे थे। मेहराम चक गांव था। वह देख रहे थे कि किसान भूखे थे तो भी अब उनके अंदर से डर निकल गया था। उनके उत्साह को देख कर मेरी तबियत बहुत खुश हुई। मैंने कहा- क्रांति तुम्हारा स्वागत है। यह क्रांतिकारी उत्साह और निर्भय नेता का स्वप्न किसान क्रांति की थीसिस नहीं है। ठोस रोजमर्रा का बदलते हुए हिंदुस्तान की कहानी है। राहुल जी अपने विकासमान व्यक्तित्व से अतिरंजना से काम नहीं लेते। वह 'रूस में पच्चीस मास' पुस्तक में आज के रूस के विघटन की पृष्ठभूमि बताते हैं। अतीत तिब्बत का हो या भारत का हो, वह उसे बदलते हुए विश्व के साथ जोड़ते हैं। वोल्गा से गंगा की कहानियां हों, या मध्य एशिया का इतिहास, वास्तव में उनके विकास का सूत्र था : नवीन मानवता का पक्ष। रूस और चीन हर बार उनकी तिब्बत और यूरोप यात्रा के केंद्र में रहा। वह यह मानते थे, 'नवीन सोवियत राष्ट्र सारी मानवता की आशा है।'

ऐतिहासिक कर्त्तव्य और औचित्य बदलता है और उसे बदलने के लिए सत्य के पक्षधर आगे आते हैं। जनता को धोखा देने वाले आज फ़िर सिर उठा रहे हैं। स्वामी करपात्री ने हिंदू राष्ट्र के बहाने मुसलमानों को देश निकाला देने की दलील दी थी। राहुल जी ने उनकी दलीलों का वैज्ञानिक उत्तर दिया था 'रामराज्य और मार्क्सवाद' पुस्तक में। वह दृढ़ता से कहते हैं : 'मुझे गाली भले ही दे लें, किंतु यह ख्याल रखें कि आज के कितने ही हिंदू लेखकों की भांति मैं यहां सत्य के साथ गद्दारी करने के लिए तैयार नहीं हूं।

...मैं आज की संकीर्ण हिंदू मनोवृत्ति की परवाह नहीं करता, मैं परवाह करता हूं सत्य की।' राहुल ने हर क्षेत्र में यही सत्य की जीवन यात्रा हमें सिखाई है। जब जो काम उनके सामने रहा, वह निर्णय उसके लिए आगे रहे, किसान आंदोलन, इतिहास लेखन तक वह सत्य की ही कहानी जीते रहे। वह एक साथ समय की धारा के रचनाकार हैं, दूसरे इतिहास के राजनीतिज्ञ योद्धा हैं। हमें उनकी रचनाओं से विकासमान मूल्यों की पहचान अभी करनी है।